Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

महाराव सिरोही एवं मेवाड़ महाराणा मुगल बादशाह अकबर के विरुद्ध

भरत कुमार माली*

* शोधार्थी, इतिहास विभाग मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

प्रस्तावना – महाराव उदयसिंह की 10 रानियाँ थी लेकिन उनकी नि:संतान मृत्यु के बाद एकमात्र व्यक्ति मानसिंह दूदावत था जो इस समय मेवाड़ के कुम्भलगढ़ में महाराणा उदयसिंह के साथ था। महाराणा उदयसिंह कुंवर मानसिंह की वीरता बहादूरी से बहुत खुश थे तथा शिकार में मानसिंह द्वारा शौर्य व श्रेष्ठता बताने पर हमेशा शिकार के समय अपने साथ रखते थे। शिकार के सिलसिले में महाराणा उदयसिंह तथा कुंवर मानसिंह कुम्भलगढ़ आये थे। इसी समय सिरोही मेवाड़ महाराव उदयसिंह का देहान्त हो गया तब सिरोही वालों ने सोचा की अगर मेवाड़ महाराणा के महाराव उदयसिंह के नि:संतान मृत्यु की जानकारी मिली तो वे यहाँ आक्रमण कर देगे और आबू–सिरोही क्षेत्र पुन: मेवाड़ के पास चला जायेगा। अत: सभी बातों को देखकर मानसिंह को जानकारी देने तथा उसे अतिशीघ्र सिरोही बुलाने हेतु भरोसेमन्द व्यक्ति जयमल साघणी को नियुक्त किया जो रात्रि के समय सिरोही से निकला और सुबह कुम्भलगढ़ पहुँच गया। कुम्भलगढ़ पर पहुँचा तब मानसिंह महाराणा के साथ कुम्भलगढ़ दुर्ग पर था। अत: जयमल साहाणी ने सम्पूर्ण घटनाक्रम मानसिंह के डेरे पर चीबा सावंत सी (सामंतसिंह) से कहा। वहाँ से जयमल साहाणी किले पर गया जिसको देखकर मानसिंह समझ गया की सिरोही में कुछ अप्रिय घटना हुई है। मानसिंह वहाँ से डेरे पर आया और चीबा सामन्त जी को बोला कि में 4–5 सवारों के साथ सिरोही की तरफ जा रहा हूँ और महाराणा के यहाँ से कोई आये तो बोलना कि मैंने दो सुअर देखे है जिसके शिकार के लिए गया हूँ।[1]

मानसिंह वहां से एक प्रहर रात होते ही सिरोही पहुँच गया और बाग में आकर ठहर गया। जहाँ सभी सरदार उससे मिले और अगले दिन दोपहर में उसको महाराव बनाया गया। जब महाराणा ने मानसिंह को बुलाने हेतु व्यक्ति को भेजा तब शिकार का बहाना किया लेकिन रात्रि में भी मानसिंह नहीं आया तब महाराणा को महाराव उदयसिंह के शीतला से गुजरने और मानसिंह के सिरोही जाने का पता चला। तब महाराणा ने मानसिंह के डेरे से जगमाल देवड़ा (बालिसा) को बुलाया और मानसिंह के जाने का कारण पूछा। तब जगमाल ने 'क्यों जाने' कहा। इस पर महाराणा ने उससे कहा कि 'परगने सिरोही के लिख दो तब उसने सुबह लिखने की बात कही। सुबह उसने स्वयं को मानसिंह का सेवक कहा तब महाराणा ने अपने पुरोहित के साथ जगमाल को सिरोही भेजा और 4 परगनों पर अधिकार करवाने को कहा। सिरोही महाराव मानसिंह ने पुरोहित का बड़ा समान आदर किया और कहा कि 'महाराणा 4 परगनों के लिए क्या फरमाते हैं। मैं तो सिरोही का राज्य उन्हें नजर करने को तैयार हूँ।' इस पर महाराणा प्रसन्न हुए और उसके राज्य में हस्तक्षेप नहीं किया।[2]

इस प्रकार मानसिंह सिरोही का शासक बनने से पूर्व मेवाड़ महाराणा उदयसिंह के साथ अपने संबंधों को स्थिर व मधुर कर चुका था। मेवाड़ महाराणा ने भी उसकी वीरता तथा योग्यता को देखकर अपने पास रखा और 18 गांव देकर अपना खास बनाया। शिकार में उसकी विशेष रूचि व कौशल देखकर महाराणा उदयसिंह उसे शिकार के समय हमेशा साथ रखते थे।

शासक बनने के बाद भी मानसिंह द्वारा महाराणा का विशेष सम्मान और इज्जत प्रदान की थी। मेवाड़ महाराणा के पुरोहित को विशेष सम्मान प्रदान किया और कुछ दिन उनका आदर सत्कार करने के बाद उनको एक हाथी व चार घोड़े महाराणा को नजर करने के साथ अर्जी में लिखा कि चार परगनो की क्या बात है सिरोही का सारा राज्य ही दीवाण जी का है और में भी दीवान जी का राजपूत हूँ।[3]

इस प्रकार महाराव मानसिंह ने बुद्धिमता व सुझबुझ से महाराणा के खतरे को टाल भी दिया और उनका प्रीति पात्र भी बन गया।

महाराव मानसिंह का जन्म सं. 1599 (ई. 1542) मागसर वदी अष्टमी को हुआ था। सं. 1619 (ई. 1562) को उनका राज्याभिषेक हुआ और बीस वर्ष की आयु में उन्होंने सिरोही व मेवाड़ दोनों राज्यों की परिस्थतियों का सम्पूर्ण ज्ञान हो चुका था।[4]

महाराव मानसिंह वीर, साहसी, योद्धा जैसा व्यक्तित्व रखते थे। उन्होंने लोहियाणा गढ़ में परकोटा, बुर्ज, पोल आदि का निर्माण करवाया था तथा दुर्ग को मजबूत बनवाया था। उनके गुरू सारणेश्वर के महन्त विद्यागिरी जी थे। उन्होंने मेवाड़ राज्य से मित्रता स्थापित कर ली थी तथा उसके सानिध्य में रहकर सिरोही क्षेत्र का विस्तार करते रहे। आबूरोड़ के समीप कोलीयों के बड़े मेवासे (संतरामपुर से पालनपुर तक लूटेरो का क्षेत्र) थे जो आये दिन जनता व व्यापारियों को परेशान तथा लूटमार करते थे। ये किसी भी शासक के अधीनस्थ नहीं आये थे। महाराव मानसिंह ने एक ही दिन में 22 स्थानों पर फौज भेजकर इन मेवासों पर अपना अधिकार कर लिया तथा 6 माह तक अपने थाने बिठाये रखा। बाद में विवश होकर कोलीयो को क्षमा याचना करनी पड़ी तथा आत्म समर्पण करने पर महाराव मानसिंह ने उसको उनकी जागीरें दे दी व ये सभी महाराव के सहयोगी बन गये।[5]

महाराव मानसिंह ने दिल्ली के बादशाहों का भी मद मर्दन किया जिस पर कवित्ता भी लिखा है कि 'एकला सो ना भला, भला सो मानाराव : दीधा दुजल जल रे, सर ढीली रे पाव। अर्थात् अकेला आदमी बड़ा कार्य नहीं कर सकता अत: उसे भला कहना अच्छा नहीं। लेकिन मानराव (मानसिंह महाराव) को भला कहना चाहिए। दूर्जनसाल के पुत्र ने अकेले ही देहली के सिर पर अपना पैर रखा।[6]

इसी वर्णन को मुहता नैणसी लिखते है कि 'राव मानसिंह ढूढारो बड़े दृढ़ ठाकुर राव हुवो: सिरोही घणौ तपीयो पातसही फौपां सु घणी बैठ कीवी। इस कथन में महाराव मानसिंह द्वारा दिल्ली मुगल शासक अकबर के वहां जाना और दहिया राजपूत के सहारे ही अपनी झाली रानी को वापस लाना तथा दहिया राजपूत की दिल्ली में मृत्यु के बाद उसके वंशजों को केर की जागीर दी गई जो बिना कर वाली है प्राप्त होता है।[7]

मानसिंह की वीरता और साहस देखकर अकबर ने सेना भी भेजी लेकिन महाराव ने उसको विफल कर दिया। महाराव के ऊपर कई बार मुसलमानों ने आक्रमण किए लेकिन उसने सभी को परास्त किया और सिरोही राज्य का विस्तार किया। सिरोही महाराव मानसिंह का मुसाहिब वजेसिंह डूंगरावत तथा प्रेमा खवासी को जासूसी के लिए शाही दरबार में भेजा था जहां राज खुल जाने पर बादशाह अकबर ने वजेसिंह को अपनी तरफ मिलाकर सिरोही महाराव को जनाने सहित 'डोला नौरोज' में लाने को कहा लेकिन मानसिंह ने युद्ध का ही रास्ता स्वीकार किया।[8]

मुस्लिम धर्म विरूद्ध सारे कार्य महाराव मानसिंह ने महाराणा उदयसिंह व मेवाड़ राज्य से प्रेरणा लेकर किये थे। मेवाड़ महाराणा ने भी कभी अकबर या मुस्लिम अधीनता स्वीकार नहीं की और अपने जनाने को कभी भी अकबर के नौरोज डोला में नहीं भेजा था। साथ ही अपनी स्वतंत्रता को हमेशा बनाए रखा उसके लिए चाहे अपने प्राण भी त्यागने पड़ जाए। उसी नीति का अनुसरण महाराव मानसिंह ने भी किया। वह महाराणा उदयसिंह का समकालीन ही था तथा दोनों की मृत्यु सं. 1628 (ई. 1572) में हुई थी। दोनों में मुस्लिम शत्रुओं से निरन्तर युद्ध किया और अपने राज्य को स्वतंत्र बनाए रखा।

महाराव मानसिंह अबुर्दांचल के सत्रह दुर्गों का स्वामी था जिसमें सिरवणा, अचलगढ़, बसंतगढ़, चौटिलागढ़, लोहियाणा गढ़, कोलरगढ़, धिधगगढ़, श्रीकण्ठगढ़, निखंगर गढ़ प्रमुख थे। उनके समय ही सिरोही की सेना अधिक मजबूत बनी। उन्होने ही सिरोही में सैनिक मजबूती हेतु हथियार के कारखाने खोले जिसमें तलवारें, भाले (नेजे), कटारी, तमचे, बंदूके आदि उत्ताम स्तर की बनने लगी।[9]

सं. 1628 (ई. 1592) में महाराव मानसिंह आबू यात्रा पर गये थे जहां रात्रि भोजन कर रहे थे। वहाँ पर उनके साथ कल्ला परमार भी था जो महाराव उदयसिंह का प्रधान पंचायण परमार का भतीजा था। जिसे महाराव मानसिंह ने जहर देकर मार दिया था। उसने रात्रि भोजन के समय महाराव पर कटार से वार किया और भाग गया। विष बुझी कटारी के कारण एक प्रहर के बाद उनका वहीं देहान्त हो गया। उनका दाहकर्म अचलेश्वर मंदिर के सामने हुआ था। इस घटना के पीछे जोधपुर के मोटाराजा उदयसिंह का हाथ माना जाता था। क्योंकि अकबर युद्ध व संघर्ष से मानसिंह को जीत नहीं पाया था और छल के द्वारा उसने मानसिंह को अपने रास्ते में हटा दिया। मरते समय नि:संतान होने पर उन्होंने अपने काका नदिया ठिकाने के भाणसिंह के पुत्र सुरताठा सिंह को शासक बनाना नियुक्त किया और उनकी मृत्यु के बाद महाराव सुरताण शासक बने।[10]

महाराव सुरताण एवं महाराणा प्रताप – महाराव मानसिंह तथा महाराणा उदयसिंह का देहान्त एक ही वर्ष सं. 1628 (ई. 1572) में हुआ। उनके उत्तराधिकारी भी इसी वर्ष में राज्य सिंहासन प्राप्त किया और दोनों नव शासकों का सामना एक ही शक्ति मुगल शासक अकबर से हुआ। दोनों ही शासक अपने–अपने राज्य में सदैव अग्रणी बने रहे और विश्व में विख्यात है। ये दोनों शासक महाराव सुरताण (सुल्तान) और महाराणा प्रताप है जो आज भी विश्व में प्रसिद्ध है। महाराव सुरताण व महाराणा प्रताप के मध्य राजनैतिक सम्बन्ध बहुत मजबूत रहे और दोनों ने एक–दूसरे की सहायता की। दोनों में समानताएँ बहुत सी है क्योंकि दोनों ने मुगल अकबर की अधीनता डोला और नौरोज वाली 'काजल (नैत्राजन) की कोटड़ी' रूपक कलंक को अपने सिर पर लगने नहीं दिया। दोनों वीर प्रतापी व महान शासक जिनके नाम से दोनों राज्य पहचाने जाते है वे दोनों शासक एक–दूसरे के समकालीन थे। इस पर एक कविता भी है – अबर नृप पतशाह अगे, होय भ्रत जोड़े हाथ। नाथ उदेपुर न नमयो, नमयों न अरबुद नाथ।[11]

महाराव सुरताण का जन्म सं. 1616 (ई. 1559) में हुआ और मात्र 12 वर्ष आयु में वे सिरोही के महाराव बने। शासक बनते ही नाबालिग स्थिति को देखकर सिरोही के अन्य सामन्तों जिनमें देवड़ा बीजा (बजा) हरराजोत प्रमुख था, वे सभी राव सुरताण को गद्दी से हटाकर सिरोही राज्य पर अधिकार चाहते थे। सुरताण बचपन से ही वीर, बहादुर व अच्छा धनुर्धर था। सिरोही क्षेत्र में प्रसिद्ध है कि महाराव मानसिंह के समय जब अकबर ने सिरोही पर चढ़ाई की थी तब सुरताण जो केवल दस वर्ष का था उसके तीर से ही अकबर जख्मी हुआ था। इसका प्रमाण कवित के रूप में निम्न है – 'पर्वत जतशे प्रमाण, नख जतरो अंजस नहीं, त्रां सहजा सुलतान, विधो माण नरद वन। अर्थात् मुकाबला किया जाए तो एक तरफ बड़ा पहाड़ (यानी बादशाह) और दूसरी तरफ नख साप्रमाण (अर्थात् सुरताण) तब भी है, भाण नरेन्द्र का पुत्र तेने सहज–सरलता से सुल्तान (बादशाह) को विंध डाला।[12]

नाबालिग अवस्था में ही महाराव बनने से मानसिंह का प्रमुख मुसाहिब बीजा (विजयसिंह) देवड़ा और अबातन सुरताण दोनों सिरोही का शासक बनना चाहते थे। बीजा ने सबसे पहले महाराव के चाचा सूजा रणधीरोज देवड़ा जो महाराव का पक्षधर था एवं बहादुर तथा अच्छे–अच्छे घोड़े, मरने–मारने वाले राजपूतों को रखता था। उसे मारने हेतु अपने चचेरे भाई रावत सेखावत को सेना सहित सुजा देवड़ा की हवेली पर भेजा और धोखे से उसे मार दिया। उसके बाद बीजा देवड़ा ने महाराव को धोखे से कैद कर लिया और महाराव मानसिंह की बाड़मेरी रानी जो गर्भ होने के कारण सती नहीं हुई और उसके एक पुत्र भी हुआ। जो अपने मायके बाड़मेर रहती थी। उसको बुलाकर उसके पुत्र को महाराव बनाना तथा उसका संरक्षक बनकर सिरोही पर अधिकार करना शुरू किया। कुछ समय बाद बालक अचानक मर गया। कैद में सुरताण ने डूंगरोत देवड़ा की मदद से शिकार के बहाने से भागकर रामसीन आ गया जहाँ उसके काका सूजा देवड़ा की विधवा और उसके पुत्र भी आ गये और शांति से रहने लगे। सिरोही पर वीजा देवड़ा ने अपना अधिकार कर लिया।[13]

बीजा देवड़ा ने 4 माह सिरोही पर राज्य किया और जब इस सम्पूर्ण घटनाक्रम का पता खेमराज चीबा द्वारा मेवाड़ महाराणा प्रताप को लगा तब महाराणा ने अपने भांजे कल्ला मेहाजलोत जो महाराव जगमाल के द्वितीय पुत्र मेहाजल का पुत्र था उसे ई. 1572 में मेवाड़ी सेना देकर सिरोही पर भेजा। मेवाड़ी सेना को देखकर बीजा देवड़ा ईडर भाग गया और कल्ला सिरोही का महाराव बन गया। महराव कल्ला चीबा खेमराज के सहयोग से शासक बना था तो कल्ला ने चीबा खेमराज खीवसिंह/खीबा भारमलोत को अपना प्रधान नियुक्त किया। सारा काम काज यही देखता था। चीबा खेमराज की शक्ति बढ़ने लगी तो वह अपने सामने किसी को कुछ नहीं मानता था। तब समरा देवड़ा, सूरा देवड़ा और हरराज देवड़ा (डूंगरावत तेजसी का पोता व

सुरा देवड़ा का चचेरा भाई।) कूटनीतिक का सहारा लेकर कल्ला के पास शामिल हो गये और सुरताण को भी मना कर कल्ला की अधीनता स्वीकार करा दी जिससे प्रसन्न होकर कल्ला ने सुरताण को कई गाव जागीर में दिये और इन गाँवों से सुरताण अपनी सेना मजबूत करने लगा।[14]

देवड़ा चीबा और खीवा/खेमराज अपना वर्चस्व बढ़ाने लगा और देवड़ा समरा, सूरा व हरराज को नीचा दिखाने लगा। एक बार बैठने वाले गलीचे कालीन दरी को लेकर पाता चीबा (खेमराज चीबा का भाई) से इनकी बहस हो गई तब ये तीनों सुरताण के पास रामसीन चले गये और तीनों ने वहाँ उसका राज्यतिलक कर दिया। उन्होंने देवड़ा बीजा को ईडर से बुलाया। बीजा देवड़ा 150 सिपाहियों के साथ रोहुआ व सरोतरा/सिरोत्रा होता हुआ वरमाण पहुँचा। राव कल्ला ने चुली गांव के रावतसिंह हामावत देवड़ा (इसके पिता को महाराव मानसिंह ने मारा था) को 500 सवार देकर गिरवर द्वारे (तोड़ा का दरवाजा) पर रोकने हेतु भेजा। वरमाण से 1 कोस (लगभग 3 किमी) दूर दोनों सेनाओं में युद्ध हुआ और रावतसिंह हामावत घायल हुआ तथा उसकी सेना के 40 सैनिक मारे गये व 60 घायल हुए। बीजा देवड़ा इस युद्ध में जीत गया और उसके केवल 13 सैनिक (सिरोही राज्य का इतिहास में केवल 1 सैनिक लिखा है) वीरगति को प्राप्त हुए। देवड़ा बीजा यहाँ से रामसीन आ गया और सुरताण से क्षमा मांगी तब सुरताण ने उसे माफर कर दिया तथा अपनी शक्ति बढ़ाने हेतु जालोर के मालिक को अपनी तरफ मिलाने या सहायता लेने हेतु 1 लाख मुद्राएँ देने का वादा किया। लेकिन बिहारी पठान मलिक खां ने रूपयों के बदले 4 परगने क्रमश: सियाणा, लोहियाणा, बड़गांव और डोडियाल मांगे। मांग स्वीकार करने पर मलिक खां ने 1500 सवार सुरताण के पास भेज दिये।[15]

सुरताण के पास 3000 की सेना और महाराव कल्ला के पास 4000 की सेना थी। कल्ला ने अपनी सेना की मोर्चाबंदी कलिन्द्री गांव में कर दी। लेकिन सुरताण ने सिरोही पर ही आक्रमण करना चाहा। जब कल्ला को वह बात पता चली तब उसने कालिन्द्री से 1 कोस दूर सुरताण की सेना का रास्ता रोक दिया और वहाँ भयंकर युद्ध हुआ। इस युद्ध में सुरताण की सेना विजय हुई। इसमें सुरताण की तरफ से 20 व्यक्ति और प्रमुख सेनापति सूरा/सूरसिंह नरसिंहोत देवड़ा भी मृत्यु को प्राप्त हुआ जबकि कल्ला की सेना के कई व्यक्तियों सहित प्रधानमंत्री खींबा (खेमराज चीबा), मुकन्ददास, श्यामदास व दलपत सिसोदिया (मेवाड़ी सेना), चीबा, पाता आदि मृत्यु को प्राप्त हुए। राव कल्ला भाग कर पहाड़ों में चला गया और सिरोही पर सुरताण का अधिकार हो गया और राजमहल में पहुँच कर राव कल्ला के जनाने (पत्नी व बच्चें) को इज्जत व हिफाजत के साथ कल्ला की जागीरी विसलपुर बांकली व कोरटा में भेज दिया। यह युद्ध सं. 1631 (ई. 1574) में हुआ था और पुन: राजगद्दी प्राप्त करते समय महाराव सुरताण की आयु 15 वर्ष थी।[16]

सिरोही पर महाराव सुरताण का शासन था लेकिन राज काज प्रधानमंत्री बीजा देवड़ा सम्भालने लगा। उसका प्रभाव पुन: बढ़ने लगा तब सुरताण ने अपने ससुराल बाड़मेर से बीस हट्टे कट्टे राजपूत बुलाए तथा अपने अंगरक्षक नियुक्त किये। साथ ही उनकी रानी बाड़मेरी जो बुद्धिमान व वीर प्रवृत्ति की थी उससे राय ले लेकर अपना रौब व प्रभाव बढ़ाने लगे। सभी राजपूत सहित बीजा देवड़ा के भाई लूणां व माना को भी अपनी तरफ मिला दिया। इन सब से बीजा का प्रभाव कम हो गया और अपनी जागीरी बावली में चला गया। वहाँ रहकर भी फसाद करता ही रहा।[17]

इसी वर्ष बीकानेर महाराजा रायसिंह गुजरात के सोरठ में मुगल शासक अकबर का अधिकार करने जा रहा था तब वह सिरोही राज्य से गुजरा तब सिरोही महाराव सुरताण ने उसका आतिथ्य किया और सारा घटनाक्रम तथा देवड़ा बीजा वाली बात बताई। तब रायसिंह ने कहा कि तुम अपना आधा राज्य अकबर बादशाह को दे दी तो में बीजा देवड़ा को यहाँ से निकलकर आपका रास्ता साफ कर दूंगा। बीकानेर रायसिंह ने 500 सवारों सहित राठौड़ मदन पातावत को बीजा देवड़ा के विरूद्ध कार्रवाई हेतु भेजा और उसने बीजा को भगाकर सिरोही के आधे भू-भाग पर अधिकार कर लिया। रायसिंह वहाँ से सोरठ आया और उस पर अधिकार पर पुन: बादशाह के पास पहुँचा तथा सिरोही का घटनाक्रम बता दिया। इस पर अकबर और उसके दीवान, बख्शी आदि ने कूटनीतिक चाल चल कर आधा सिरोही का राज्य महाराणा प्रताप के भाई कुंवर जगमाल को दे दिया। जगमाल का विवाह सिरोही महाराव मानसिंह की पुत्री से भी हुआ था। जगमाल शाही फरमान लेकर सिरोही आ गया और अब सिरोही राज्य दो भागों में महाराव सुरताण व जगमाल के पास गया। बीजा देवड़ा भी मौका देखकर जगमाल की सेवा में आ गया।[18]

महल पर अधिकार से शुरू हुई लड़ाई में महाराव सुरताण की अनुपस्थिति में जगमाल व बीजा देवड़ा ने मिलकर सिरोही राजमहल पर अधिकार करना चाहा लेकिन सुरताण के वीर राजपूतों सांगा सोलंकी, चारण आसिया दूदा खंगार आदि ने विफल कर दिया। लज्जित होकर जगमाल व बीजा अकबर के पास बड़ी सेना लेने चले गये। अकबर ने राव चन्द्रसेन के तीसरे पुत्र राव रायसिंह चन्द्रसेनोत (सोजत परगना), दांतीवाड़ा के मालिक कोलीसिंह के नेतृत्व में विशाल सेना भेजी। इस सेना को देखकर जालोर के ताज खाँ ने आत्मसमर्पण करके अधीनता स्वीकार की लेकिन सुरताण ने कुछ सेना महल में रखकर आबू पहाड़ पर चले गये जो महाराणा प्रताप व मेवाड़ की छापामार/गौरिल्ला पद्धति से प्रेरित था। महाराव सुरताण भी कही न कहीं महाराणा प्रताप से प्रेरणा ले रहा था। सिरोही पर अधिकार होने के बाद जगमाल ने आबू अचलगढ़ पर भी सम्पूर्ण अधिकार करना चाहा। जगमाल ने सोचा की पहले सुरताण के सहायक सामन्तों के ठिकानों पर आक्रमण करना चाहिए जिससे वे अपने ठिकाने पर रक्षा हेतु आएंगे और महाराव कमजोर हो जायेगा। इस पर वीजा देवड़ा व मांडणोत राठौड़ को कुछ सेना देकर परगनों भी तरफ भेजा। सुरताण ने अच्छा मौका देखकर दत्ताणी नामक स्थान पर (17 अक्टूबर) सं. 1640 (ई. 1583) कार्तिक सुदि ग्यारस को जगमाल सहित मुगल सेना पर आक्रमण कर दिया। समरा देवड़ा सुरताण का सेनापति था और महाराव सुरताण के साथ मिलकर देवड़ा सेना ने भयंकर मारकाट की तथा इस युद्ध में विजय प्राप्त की। इस युद्ध में महाराव के कुछ सैनिक मारे गये लेकिन अकबर की सेना में जगमाल, राव रायसिंह चन्द्रसेनोत, कोलीसिंह दांतीवाड़ा सहित बहुत से सैनिक मारे गये। दुरसा आढा नामक चारण इस युद्ध में घायल हुआ। जिसे महाराव ने उपचार करवाकर अपना पोतपाल नियुक्त किया। इस युद्ध पर दुरसा आढा ने लिखा कि 'नंद गिरी नरेश, कटार बंध चहुआण, दत्ताणी खेतरां, जेत जुहार। गल जोड़े छत्र, धरियारा गठनहार, बंका भड़ारा, पांदेरिण द्वार।। घोड़े चढ़ हाथीयारी गजधड़ारा विदुशण हार, सुरताण ग्रह नभ भूषण।। शरणाया साधार, शरणा थी वज्रे पिंजर।

अर्थात् अर्बुदगिरि के राजा कटार बांधने वाला चौहान (राज्य चिह्न कटार) दत्ताणी क्षेत्र में विजय प्राप्त करने वाला को नमस्कार हो। दो छत्र धारी (जगमाल व रायसिंह) को साथ ही मारा और निश्चय विजय प्राप्त करके आवे उनको गाढ़ (नाश करने) देने वाला बंका (बहादुर) योद्धाओं ने सीधा

करने वाला, घोड़े पर सवार होकर (घोड़ी का नाम केसरी) हाथियों की सवारी वालों को व हाथियों के समूह को विध्वंश करने वाला, गगन मण्डल वे गुढ़ों का आभूषण रूप (सूर्य रूप) सुरताण शरण आने वालो को अच्छा आशय देने वाला और शरण रहने वालों का वज्र के प्रिजर समान बनकर रक्षण करने वाला है। इस युद्ध में सुरताण की वीरता अमर रही है।[19]

महाराणा प्रताप ने जब इस युद्ध के बारे में सुना तो उन्हें बहुत प्रसन्नता हुई लेकिन गद्दी विवाद के कारण जगमाल की मृत्यु पर उन्होंने शोक नहीं मनाया। महाराणा प्रताप के समान ही सुरताण ने भी सामरिक महत्व वाले आबू, अचलगढ़ को अपना युद्ध क्षेत्र बनाया और सामरिक युद्ध नीति गुरिल्ला/छापामार/पहाड़ी नीति का सहारा लेकर उस समय की सर्वोच्च शक्ति को परास्त कर दिया। वह महाराणा प्रताप के पद्चिह्नों पर चलता रहा।

लल्लू भाई देसाई लिखते है कि बीजा और उसका भाई धनसिंह भाग गये जिसके पीछे महाराव सुरताण ने कवि आसिया दूदा व सामन्त सिंह सूरसिहोत डुंगरावत भी था। सामंत सिंह ने धनसिंह को मार दिया लेकिन बीजा देवड़ा भाग कर महाराणा मेवाड़ के पास चला गया। तब दूदा के पुत्र दला आसिया को महाराणा के दरबार में भेजा। दला ने बीजा के लिए कवित गाया जिसको सुनकर बीजा महाराणा की सेवा से चला गया और जान बचाकर अकबर के पास चला गया।म उपर्युक्त कथन मनगढ़त की प्रतीत होता है या चारण कवियों द्वारा बनाया हुआ लगता है, क्योंकि महाराणा प्रताप और महाराव सुरताण दोनों समान उद्देश्य के लिए लड़ रहे थे और उनका दुश्मन भी समान था। दोनों अपनी मातृभूमि के लिए लड़ते रहे और कही न कहीं महाराव सुरताण महाराणा प्रताप से प्रेरित था तथा दत्ताणी के युद्ध में विजय होने के पीछे उसे ई. 1576 का हल्दीघाटी का युद्ध तथा ई. 1582 का दिवेर युद्ध का ज्ञान अवश्य होगा। जिसमें महाराणा प्रताप ने कम सेना बल होते हुए भी अकबर की सेना को परास्त किया और मुगलों की अजेयता को तोड़ दिया था। महाराणा प्रताप स्वतंत्रता के पुजारी थे जिन्होंने अकबर जैसी शक्ति से सामना करने हेतु मेवाड़ के समीपस्थ सभी शासकों को एकत्रित करके एक संगठन बना दिया जिसमें सिरोही राव सुरताण, ईडर का शासक, डूंगरपूर-बांसवाड़ा के शासक, मारवाड़ का राव, चन्द्रसेन आदि शासक उसके साथ मिलकर अकबर मुगलों को चुनौती दे रहे थे।

इसके साथ ही बीजा देवड़ा जगमाल के साथ हो गया तथा महाराणा प्रताप द्वारा जगमाल से वैर ही था अत: वे जगमाल के साथी बीजा को अपने यहाँ कभी शरण नहीं देने वाले थे। साथ ही लल्लु भाई के अलावा किसी अन्य ग्रंथ में यह जानकारी नहीं मिलती है। मुहतां नैणसी व गौरीशंकर हीराचन्द ओझा भी अपने ग्रंथों में बीजा देवड़ा के दत्ताणी युद्ध में हार के बाद सीधा अकबर के पास जाना लिखते है जो सही प्रतीत होता है।

बीजा देवड़ा अकबर के पास गया। अकबर अपनी हार से क्रुद्ध ही था और दरबार में जोधपुर शासक मोटा राजा उदयसिंह भी जो सिरोही राज्य को मारवाड़ में मिलाना चाहता था। अत: अकबर ने मोटा राजा उदयसिंह, जामबेग तथा बीजा देवड़ा के नेतृत्व में सं. 1644 (ई. 1588) में मुगल सेना सिरोही भेज दी। महाराव सुरताण ने सैन्य बल अधिक देखकर पुन: गौरिल्ला पद्धति का अनुसरण कर आबू की शरण में चले गये। इस बार महाराव स्वयं द्वारा निर्मित वास्थानजी के गढ़ गये और सं. 1644 (ई. 1587-88) फाल्गुन सुदि पंचमी को शाही सेना ने नीतोरा गांव लूटा और एक माह तक सेना वही पड़ी रही। मोटाराजा सुरताण ये भय खाते थे अत: उन्होंने यही रहना उचित समझा क्योंकि वे जगमाल की गलती को नहीं दोहराना चाहते थे। तब कुछ उपाय नहीं होता देख मोटाराजा उदयसिंह ने चालाकी के द्वारा बगड़ी (सोजत) के ठाकुर राठौड़ पृथ्वीराजोत को अपनी तरफ से किसी भी प्रकार का छल कपट न करवाकर सुरताण के प्रमुख सरदारों को वार्ता हेतु बुलवाकर राय रतनसिहोत के हाथों मरवा दिया। तब नाराज होकर वैरसल राठौड़ ने उदयसिंह के सामने ही राय रतनसीहोत को मारा और स्वयं कटार भौंक कर मर गया। उसका स्मारक नीतोड़ा गांव में बना हुआ है।[20]

बीजा देवड़ा जामबेग के भाई को लेकर युद्ध करने के लिए वास्थानजी की तरफ गया। जहां सुरताण की सेना से युद्ध हुआ और सुरताण के सामन्त सांगा सोलंकी के हाथों वह मारा गया व जामबेग का भाई घायल हुआ। कुछ फायदा न देखकर मोटा राजा उदयासिंह महाराणा प्रताप के भाणेज कल्ला मेहाजेलोत को पुन: सिरोही का शासक बना कर चला गया। उनके जाने के बाद सुरताण ने सिरोही की तरफ कूच की तब कल्ला यहाँ से भाग कर मारवाड़ चला गया जहाँ उसे बीसलपुर की जागीरी मिली और इसके वंशज विसलपुर के लाखावत कहलाते हैं और जागीरि मारवाड़ में अभी भी है।[21] महाराणा प्रताप ने गुजरात आक्रमण के समय सिरोही राव सुरताण, ईडर राव नारायणदास, जालौर ताजखां को साथ लेकर किया था।[22]

निष्कर्ष - इस प्रकार सिरोही के दोनों महाराव मानसिंह एवं सुरतान का मेवाड़ से विशेष सम्बन्ध रहा और उन्होंने हमेशा मेवाड़ का साथ दिया। दोनों राजवंशों ने अपनी सामरिक स्थिति को मजबूत बनाने हेतु वैवाहिक स्म्बन्धों एवं राजनैतिक रूप से मजबूत बनने हेतु सहयोग के रूप में कार्य किया जिनका अध्ययन इस शोध प्रबन्ध में किया गया है।[23]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 124-125; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 232-33
2. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 124-126; उदयपुर राज्य का इतिहास, पृ. 353-54; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 234; अनु. रामनारायण दुग्गड़, मुहनोत नैणसी की ख्यात, पृ. 135-136; वीर विनोद, भाग द्वितीय, पृ. 65-66
3. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 125-126; सिरोही गौरव, पृ. 95
4. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 122; सिरोही गौरव, पृ. 90
5. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 125-126; सिरोही गौरव, पृ. 95; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 235
6. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 126-127; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 236; सिरोही गौरव, पृ. 96
7. अनु. रामनारायण दुग्गड़, मुहणोत नैणसी की ख्यात, पृ. 136-137; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 236-237; सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 127; सिरोही गौरव, पृ. 96-97
8. चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 238; सिरोही गौरव, पृ. 96
9. चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 237; सिरोही गौरव, पृ. 97
10. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 127-128; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 239; सिरोही गौरव, पृ. 102
11. चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 241
12. सिरोही गौरव, पृ. 103; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 251
13. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 124; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 243-244; सिरोही गौरव, पृ. 104

14. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 125; सिरोही गौरव, पृ. 105; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 245
15. सिरोही राज्य का इतिास, पृ. 125–126; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 247–248; सिरोही गौरव, पृ. 106–107; वीर विनोद, भाग द्धितीय, पृ. 160–161
16. वीर विनोद, वही, पृ. 161; सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 125–26; चौहान कुल कल्पद्रुम, 249–250; सिरोही गौरव, पृ. 107–108
17. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 127; वीर विनोद भाग द्धितीय, पृ. 161–62; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 257; सिरोही गौरव, पृ. 108–09
18. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 127; चौहाल कुल कल्पद्रुम, पृ. 258; सिरोही गौरव, पृ. 109–110; उदयपुर राज्य का इतिहास, पृ. 368; वीर विनोद, भाग द्धितीय, पृ. 162
19. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 127; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 262–271; वीर विनोद, भाग द्धितीय, पृ. 161–63; उदयपरु राज्य का इतिहास, पृ. 368–369
20. चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 272
21. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 127–128; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 273–274; सिरोही गौरव, पृ. 116–117
22. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 127; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 275; सिरोही गौरव, पृ. 117–118
23. उदयपुर राज्य का इतिहास, वही, पृ. 385

****